# राजस्थानी लोक महाभारत

मूलचन्द 'प्राणेश'

# भूमिका

## राजस्थानी लोक महाभारत : एक अध्ययन

### संज्ञा और स्वरूप

'राजस्थानी लोक महाभारत' आकार-प्रकार की दृष्टि से वृहत्काय लोक-गाथा है। लोक में यह गाथा 'पांडवों रा झौड़ा' अथवा 'अखाड़ा' नाम से प्रसिद्ध है। इसमें इतिहास-विश्रुत पांडवों के चरित्र का विस्तार के साथ वर्णन हुआ है। यह सम्पूर्ण गाथा विभिन्न 'डिवाळों' (पर्वों) में विभक्त है। डिंवाळों का नामकरण प्रतिपादित विषय-वस्तु के आधार पर हुआ है, यथा-द्रौपदी पुराण, आंबा रस, कुमेर कथा, कर्ण कथा इत्यादि। श्रद्धालु भक्तों द्वारा आयोजित रात्रि जागरण (जम्मा) में श्रोताओं की अभिरुचि के अनुसार लोक गायक उपर्युक्त डिंवाळों में से किसी एक का सस्वर गायन प्रस्तुत करते हैं। डिंवाळ की प्रत्येक कड़ी का सम्मिलित स्वर में गायन के पश्चात् पाटवी (मुख्य) गायक उस कड़ी की सप्रसंग सरलभाषा में व्याख्या प्रस्तुत करता जाता है, अतएव इन डिंवाळों को 'अरथावणीहाळा झौड़ा' भी कहा जाता है। यह सम्पूर्ण गाथा प्रसंगानुसार विभिन्न डिंवाळों में विभाजित होते हुए भी प्रमुख रूप से 'महाभारत' की विषय-वस्तु का ही प्रतिपादन करती है, अतएव इस गाथा को 'महाभारत' की संज्ञा देना सभी दृष्टिकोणों से समीचीन समझा गया और इसके 'राजस्थानी' तथा 'लोक' विशेषण इसकी राजस्थानी लौकिक भाषा, भाव एवं प्रकार की दृष्टि से उचित हैं।

**एक प्रलंब गाथा**

लोकवार्ताविदों ने प्रलंब गीत को लोक-गाथा कहा है। यहां पर गीत शब्द व्यापक अर्थ में प्रयुक्त है। लोक-गाथाओं की प्रमुख विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए इन्हें प्रधानतया निम्नांकित दस भागों में विभक्त किया गया है—

1. रचयिता का अज्ञात होना
2. प्रामाणिक मूलपाठ का अभाव

3. संगीत और नृत्य का अभिन्न साहचर्य
4. स्थानीयता का प्रचुर पुट
5. मौखिक परंपरा
6. उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव
7. अलंकृत शैली की अविद्यमानता
8. कवि के व्यक्तित्व की अप्रधानता
9. लंबे कथानक की प्रमुखता
10. टेक पदों की पुनरावृत्ति

लोक-गाथाओं की उपर्युक्त विषेशताएँ वाङ्मय की समग्र लोक-गाथाओं को सामने रख कर निर्धारित की गई हैं, अतः किसी प्रदेश विशेष की लोक-गाथा में ये सभी उपलब्ध हों, ऐसा संभव नहीं भी हो सकता है। यहाँ अग्रांकित पंक्तियों में राजस्थानी लोक महाभारत में उपलब्ध विशेषताओं पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जा रहा है—

## 1. रचयिता का अज्ञात होना

'राजस्थानी लोक महाभारत' के वर्तमान तक उपलब्ध सभी डिंवाळों के अंत में रचयिता का नाम उपलब्ध होता है और किसी-किसी डिंवाळ में रचना-तिथि का भी उल्लेख हुआ है। यह तो सुनिश्चित है कि चाहे शिष्ट-साहित्य की कृति हो, चाहे लोक-साहित्य की, उसका निर्माण किसी-न-किसी व्यक्ति के द्वारा ही संभव है। परन्तु शिष्ट-साहित्य की कृति लिपिबद्ध होने से उसमें परिवर्तन और परिवर्धन की संभावना बहुत ही कम रहती है। परिणामस्वरूप रचयिता के मूल-भाव सुरक्षित रहते हैं। लोक-साहित्य की सुरक्षा का एक मात्र आधार श्रुति-परम्परा है, अतः निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि तीन शताब्दी पूर्व सर्जित कृति का वही स्वरूप रहा होगा, जो आज उपलब्ध है और ऐसा होना संभव भी नहीं है। राजस्थानी लोक महाभारत के अतिरिक्त भी जो अन्य लोक-गाथा काव्य उपलब्ध होते हैं, उनमें भी रचयिता एवं रचनाकाल का उल्लेख मिलता है, परन्तु अलग-अलग पाठों में अलग-अलग रचयिताओं के उल्लेख से उनकी प्रामाणिकता संदिग्ध ही बनी रहती है। इस प्रकार के उल्लेखों के पीछे राजस्थानी लोक-गायकों की यह मनोवृत्ति भी काम करती है कि रचनाकार के नाम की 'छाप' अथवा 'साभोग' के बिना कोई भी कृति पूर्ण नहीं मानी जा सकती है, अतः मूल रचनाकार का नाम याद नहीं हो तो भी वे किसी-न-किसी के नाम की छाप लगा देते हैं।

## 2. प्रामाणिक मूल-पाठ का अभाव

'राजस्थानी लोक महाभारत' का राजस्थान में व्यापक प्रचार रहा है। इसी लोकप्रियता के परिणामस्वरूप इसके उपलब्ध डिंवाळों में पर्याप्त पाठ-भेद मिलता है। कितने ही डिंवालों के हस्तलेख (लगभग एक शताब्दी पूर्व के) भी मिले हैं, जिन्हें अपनी याददास्त के लिए गायकों ने लिपिबद्ध कर लिया था। पांडुवां री कथा, हर कथा, देसूंटो, पांडुवां री गोठ इत्यादि डिंवाळों के अतिरिक्त अन्य सभी डिंवाळों के एक से अधिक पाठ संकलित किये गये हैं। उपलब्ध पाठों को

मिलाने पर उनमें पर्याप्त अन्तर दृष्टिगोचर होता है । लोक महाभारत के कतिपय डिंवाळों—धरम धारणां, हंस पुराण, भींयो भारत, ऐळापती, अहमदो इत्यादि—के पाठों को देख कर यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि इनकी रचना के समय ये अन्य डिंवाळों की तरह पूर्ण पद्य-बद्ध थे, परन्तु वर्तमान में ये सभी 'फूटारस' हो गये हैं और विस्मृत पद्य के अभाव की पूर्ति प्रमुख-गायक अपनी ओर से गद्य मिला कर करता है ।

### 3. संगीत और नृत्य का अभिन्न साहचर्य

'राजस्थानी लोक महाभारत' का गायन संगीत के बिना कठिन ही नहीं, असंभव है । बाबा रामदेवजी के उपासक 'कामड़िया' इस गाथा को तंदूरा, हारमोनियम, ढोलक, मंजीरा, चिमटा इत्यादि वाद्यों के साथ तथा सिद्धाचार्य जसनाथजी के उपासक 'सिद्ध' गायक इसे नगाड़ा, मंजीरा, खड़ताल इत्यादि वाद्यों के साथ सम्मिलित रूप से प्रस्तुत करते हैं । विभिन्न वाद्यों की मिली-जुली ध्वनि के साथ जब लोक-गायक तन्मय हो कर डिंवाळ की कोई कड़ी (पद्य) गाते हैं तो मानो संगीत साकार रूप धारण करके श्रोताओं के सम्मुख आ खड़ा होता है और श्रोतागण मनोमुग्धकारी संगीतमय वातावरण का तन्मय होकर आनन्द प्राप्त करते हैं ।

### 4. स्थानीयता का प्रचुर पुट

'राजस्थानी लोक महाभारत' में वर्णित कथा यद्यपि सहस्रों वर्ष प्राचीन है, परन्तु श्रोतांगण उसे सुनकर ऐसी अनुभूति करते हैं, मानो यह घटना हमारे इर्द-गिर्द रहने वाले माहौल में घटित हुई हो । पांडवों के परिवार के जिस स्वरूप का लोक महाभारत में चित्रण हुआ है, वह मध्यकालीन राजपूत संस्कृति से अतिरिक्त नहीं है । माता कुंती सहित पांचों पांडवों का वर्णन देखकर ऐसे मध्यकालीन राजपूत परिवार का सहसा स्मरण हो आता है, जिसका मुखिया मर चुका हो । भीम, नकुल और सहदेव अपने बचपन में बछड़े चराने का कार्य करते हैं । मनोरंजन के लिए कौरव एवं पांडवों के बालक मिलजुल कर गुल्ली-डंडा खेल खेलते हैं । यह खेल पश्चिमी राजस्थान में खूब प्रचलित है । इसी प्रकार विवाह, गौना, औसर-मौसर, गीत, रीति-रिवाज इत्यादि प्रसंगों पर गहरा स्थानीय रंग चढ़ा हुआ है ।

### 5. मौखिक-परम्परा

'राजस्थानी लोक महाभारत' के वर्तमान तक ज्ञात एवं उपलब्ध सभी डिंवाळ पूर्ण रूप से मौखिक हैं । अपवादस्वरूप दो-तीन डिंवाळों के हस्त-लेख मिले हैं, जिन्हें स्मरण रखने की सुविधा के लिए लिख लिया गया था, उन्हें भी मौखिक सामग्री के अंतर्गत ही मानना चाहिए । कतिपय डिंवालों—जिन में हरकथा, स्याव-कर्ण घोड़ो एवं हंस पुराण प्रमुख हैं, का मूल-पाठ मात्र एक ही व्यक्ति के द्वारा कंठस्थ किया हुआ है । हरकथा एवं हंसपुराण की कथा को कंठ में धारण करने वाले लोक-गायक संप्रति भगवत-शरण हो चुके हैं, परन्तु परम प्रसन्नता का विषय है कि संस्था के सदप्रयत्न से उनके कंठों पर विराजमान लोक-गाथा का अंश कागज पर उतार लिया गया था ।

वर्तमान में मनोरंजन के नये साधनों—सिनेमा, टेलीविजन, रेडियो, ग्रामोफोन इत्यादि—के सर्व सुलभ हो जाने से नयी-पीढ़ी लोक महाभारत जैसी प्रलम्ब-गाथाओं को कंठस्थ करना एक झंझट मानती है। ऐसी स्थिति में यदि प्रचलित सामग्री को संकलित करके सुरक्षित नहीं किया गया तो वह निश्चय ही काल के गाल में समा जायेगी।

### 6. उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव

'राजस्थानी लोक महाभारत' में यद्यपि जान-बूझकर उपदेशात्मक सामग्री का समावेश नहीं किया गया है, परन्तु व्यक्तियों के चरित्र-चित्रण, प्रसंगवशात् घटी घटनाओं व परस्पर के संवादों से उपदेश ग्रहण किया जा सकता है। राजस्थानी लोक महाभारत एक बहुत बड़ी संरचना है। इतने बड़े काव्य में यदि छुट-फुट रूप में उपदेशात्मक सामग्री मिल जाये तो यह इस काव्य की कोई अतिरिक्त विशेषता नहीं मानी जा सकती। वैसे, मात्र उपदेश देने के लक्ष्य से इस गाथा-काव्य में कहीं भी किसी सामग्री का समावेश नहीं किया गया है।

### 7. अलंकृत शैली की अविद्यमानता

'राजस्थानी लोक महाभारत' एक गाथा काव्य है और इसका सर्जन एवं परिवर्धन ग्रामीण परिवेश के अंतर्गत हुआ है। वर्तमान काल में भी इसका प्रचार-प्रसार अधिकतर ग्रामों में ही है। इस गाथा के गायक एवं श्रोता दोनों ही ग्रामीण संस्कृति के प्रमुख पहरेदार हैं, अतएव इस गाथा में शिष्ट-साहित्य की तरह पांडित्यपूर्ण प्रयोगों का अभाव है। यद्यपि चरित्र-चित्रणात्मक प्रलंब गाथा काव्य होने से राजस्थानी लोक महाभारत में कथा का संगठन, विषयों की विविधता, पात्रों का चारित्रिक विकास, सौद्देश्यता इत्यादि को बखूबी निभाया गया है, परन्तु इतना होते हुए भी इसमें ग्रामीणता का पुट बराबर चलता रहता है। लोक-गायकों ने लोकानुरंजन का बहुत बड़ा ख्याल रखा है। इतने लंबे प्रबंध को सुनते-सुनते लोग उकता न जायें, अतः उन्होंने इसमें चमत्कार उत्पन्न करने के लिए लोक-विश्वासों, कवि-समयों एवं कथात्मक रूढ़ियों का खूब प्रयोग किया है। सरल प्रवाहमयी भाषा, चमत्कार उत्पन्न करने वाले भाव एवं मनोमुग्धकारी संगीत के माध्यम से लोक-गायकों ने शताब्दियों पूर्व से श्रोताओं को अपने प्रभाव से बांध रखा है, और आज भी वह ज्यों का त्यों दृष्टिगोचर होता है।

### 8. कवि के व्यक्तित्व की अप्रधानता

'राजस्थानी लोक महाभारत' का प्रत्येक डिंवाळ किसी-न-किसी व्यक्ति की 'छाप' अथवा 'सभोग' के साथ समाप्त होता है, परन्तु सम्पूर्ण डिंवाळ में कथा-विस्तार के अतिरिक्त कवि अथवा रचयिता का कोई आग्रह प्रकट नहीं होता जबकि इन डिंवाळों को दो भिन्न वर्गों के लोक-गायकों द्वारा गाया जाता है और रचयिता भी दोनों वर्गों में से हैं, फिर भी उनमें उनके धर्म, सम्प्रदाय के विधिनिषेधों को कहीं पर भी स्थान नहीं मिला है। लोक-महाभारत के समग्र डिंवाळ दोन्नों वर्गों—कामड़ियों एवं सिधों में—समानरूप में स्वीकृत हैं। गायन-शैली अपनी-अपनी होते हुए

भी, मूल-पाठ के विषय में किसी भी प्रकार का कोई मतभेद नहीं है। डिंवाळों के रचयिताओं का ऐतिहासिक महत्व, जैसा हम मानते हैं, वैसा ही है, यह संदेह से परे नहीं है।

9. लम्बे कथानक की प्रमुखता

'राजस्थानी लोक महाभारत' में पांडवों के जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा है। इस कथा में प्रत्येक पांडव के चरित्र को प्रमुख रूप से उभार कर चित्रित किया गया है। भींयो-भारत, ऐळपती अथवा सेतगेंडो और अहमदो ऐसे ही चरित्र हैं, जिन्हें मुश्किल से एक रात में गाकर पूरा किया जाता है। इतने लंबे चरित्र-चित्रण में श्रोताओं का मन रमा रहे, एतदर्थ प्रमुख-गायक अपनी कलात्मक शैली द्वारा मूल-कथा में कथानक रूढ़ियों, लोकविश्वासों, धार्मिक भावनाओं, अतिमानवीय चरित्रों इत्यादि का सम्पुट देकर उसे इतनी सजीव बना देता है कि—श्रोता आंखों में नींद होते हुए भी पूरी रात्रि भर जाग्रत रहता है।

10. टेक पदों की पुनरावृत्ति

लोक-गाथा-काव्यों में टेक पदों की पुनरावृत्तियाँ उनके प्राण होती हैं। प्रत्येक 'कड़ी' (पद्य-बद्ध) के अंत में टेक पद की पुनरावृत्ति की जाती है। इससे गायन में एक समा सा बंध जाता है और श्रोता गण उसे सुनकर झूम उठते हैं। कारण कि प्रथम तो टेक-पदों के बारंबार प्रयोग से वे श्रोताओं को भी कंठस्थ हो जाते हैं तथा द्वितीय उन टेक पदों में अधिकतर में प्रस्तुत गाथा के श्रवण का महात्म्य वर्णित होता है। 'राजस्थानी लोक महाभारत' में अनेक प्रकार के रुचिकर टेकपदों का प्रयोग हुआ है—

1. 'पांडुवां री कथा सुणै चित लाय, वधै धरम पाप खै जाय।' —पांडुवां री कथा
2. "सत रा वायक सतगुरु भाखै, जुग जुग पांडवां नै शरणै राखै।
   पांडुवां रा विड़द पांडवां नै छाजै, भीड़ पड्यां हर आप निवाजै।" —आंबारस
3. "वारी ओ नारायण तोरी गत न्यारी, शरणै राख मोटा सांई
   पांडुवां री बेड़ी दाता पार लंघाई।" —सेत गैंडा
4. "पांडु करग्या है धरती पर अमर नांव, लेग्या हबोळो हरि रै नांव रो।" —अहमदो (1)
5. "राज बाळूड़ा। कर दो नीं धरती पर अमर नांव,
   फूल कुम्हळावै रैवै वासना।" —अहमदो (2)
6. "धरम धारणा डिगै न डोलै, अलंघ बोझ मत लीजै,
   सांभळो वात दुवापर री कैऊं, हर हर राम जपीजै।" —धरम धारणा
7. घट में सिंवरो पारवती प्राण, कथा सुणै ज्यांनै गंगा रो सिनांन—कर्णकथा इत्यादि।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन के आधार पर 'राजस्थानी लोक महाभारत' राजस्थानी का 'प्रलंब लोकगाथा काव्य' सिद्ध होता है। इस गाथा-काव्य में गाथा-काव्यों की सभी विशेषताएँ मौजूद हैं। राजस्थानी के अन्य प्रलम्ब गाथा काव्यों—देवजी री पड़ (बगड़ावत), पाबूजी री पड़ (पवाड़ा), आदि की परम्परा में उपर्युक्त 'राजस्थानी लोक महाभारत' भी एक लोक-गाथा-काव्य है,

जिसका गायन कई-कई रात्रियों में चलता रहता है।

## गायक एवं गायनविधि

'राजस्थानी लोक महाभारत' राजस्थान के सुप्रसिद्ध लोक-महापुरुषों बाबा रामदेवजी एवं सिद्धाचार्य जसनाथजी के अनुयायियों—क्रमशः कामड़ियों और सिधों द्वारा 'जम्मों' एवं 'जागरणों' में गाया जाता है। दोनों गायकों में विषय-वस्तु वही होने पर भी गायकी एवं वाद्यों में पर्याप्त अंतर रहता है। निम्नांकित पंक्तियों में इन दोनों गायकों की विशेषताओं पर प्रकाश डालने का यत्न किया जा रहा है—

### बाबा रामदेवजी तँवर के अनुयायी

बाबा रामदेवजी तँवर वर्तमान में समग्र राजस्थान, गुजरात, कच्छ, घाट (पश्चिमी पाकिस्तान) इत्यादि भारत के प्रमुख प्रदेशों में लोकमहापुरुष के रूप में संपूज्य हैं। इनके उपासक इन्हें द्वारिकाधीश भगवान श्रीकृष्ण का अवतार मानते हैं। राजाओं के राज-महलों से लेकर गरीब से गरीब व्यक्ति की झोंपड़ी तक में बाबा रामदेवजी की स्मृति-स्वरूप उनके 'पगलिये' (पादचिह्न) स्थापित मिलते हैं। यद्यपि इनकी मान्यता करने वाले व्यक्तियों में छोटे-बड़े का भेद नहीं है, फिर भी तथाकथित छोटी जातियों-मेघवाळ, भांभी, गुरड़ा, बेलदार, कामड़िया इत्यादि में बाबा रामदेवजी एक मात्र इष्टदेव के रूप में सम्पूजित हैं।

बाबा रामदेवजी का जन्म विक्रम संवत 1409 में 'सिव' तहसील (जि. बाड़मेर) के डंडू-काहमेर नामक स्थान में हुआ था। इनके पिता का नाम तंवर अजमलजी एवं माता का नाम मैणादे था। इन्होंने अपने जीवन में अनेक ऐसे कार्य किये जिनसे इनकी प्रतिष्ठा में चार चांद लग गये। ये अपने जीवन-काल में ही एक सिद्ध पुरुष के रूप में प्रसिद्ध हो गये थे।

बाबा रामदेवजी ने तत्कालीन धार्मिक-शिथिलता को देखकर एक नवीन पंथ स्थापित किया था जो आगे जाकर कामड़िया-पंथ कहलाया। कामड़िया पंथ की आचार संहिता (जो कि-अत्यन्त सरल एवं मानवोचित थी) का पालन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति इस 'पंथ' में सम्मिलित हो सकता था। वर्तमान में यह पंथ इसी नाम की जाति में परिवर्तित हो गया।

### कामड़िया

कामड़िया वर्तमान में बाबा रामदेवजी का जम्मा (रात्रि जागरण) देने का कार्य करते हैं। पूर्वोक्त 'पंथ' के अनुयायी होने की स्मृति-स्वरूप ये अपने सिर पर भगवें रंग का 'साफा' बांधते हैं तथा भगवें रंग की चद्दर भी रखते हैं। जुम्मे में इन पुरुष गायकों के साथ इनकी स्त्रियां भी गाती-बजाती हैं। अपने शरीर के विभिन्न अवयवों पर तेरह मंजीरे बांधकर एक विशेष लयात्मक गति के साथ बजाने से इन स्त्रियों को 'तेरहताळी' भी कहा जाता है। 'तेरहताल' का उद्देश्य भक्ति-भाव में तन्मयता के साथ-साथ श्रोताओं का अनुरंज भी होता है। कामड़िया ज्ञातीय पुरुष एवं स्त्रियां बहुत अच्छे गायक होते हैं। गायकी ही इनका प्रमुख व्यवसाय है।

### रिखिया

'रिखिया' ऋषि शब्द में उन् प्रत्यय लगकर बना है। यह बाबा रामदेवजी के अनन्य उपासक, गायक मेघवालों की एक सम्मानित उपाधि है। भूल से कुछ लोग इन मेघवालों को भी। बाबा रामदेवजी का कामड़िया कह देते हैं, परन्तु इनको रिखिया कहना ही अधिक समीचीन रहेगा। रिखिये भी कामड़ियों की तरह बाबा रामदेव जी का जम्मा (रात्रि-जागरण) देते हैं।

### जुम्मा या जम्मा

बाबा रामदेवजी के उपासक अपनी 'बोलवा' के अनुसार अथवा वैसे ही अपने घर पर बाबा रामदेवजी के जम्मे (रात्रि-जागरण) का आयोजन करते हैं। इस प्रकार के जम्मों का आयोजन अधिकतर भाद्रपद एवं माघ मास के शुक्ल पक्ष में हुआ करता है। सर्वप्रथम आयोजक कामड़ियों एवं रिखियों को 'आखा' (साबूत अन्न) देकर निमन्त्रित करता है। आखा स्वीकार करने वाला अधिकतर प्रमुख-गायक ही होता है। वह अपनी पार्टी के अन्य सदस्यों को सूचित कर देता है। निश्चित तिथि के दिन 'गायक-मंडली' आयोजक के घर पहुंच जाती है। गायक-मंडली के सभी सदस्य सायंकालीन भोजन आयोजक के यहां करते हैं। आमन्त्रित श्रोताओं को भी बाबा रामदेव जी की प्रसादी-स्वरूप अल्पाहार करवाया जाता है, जिसे 'शेष' देना कहा जाता है।

### पाट की स्थापना

भोजन इत्यादि से निवृत्त होकर गायक-मंडली का मुखिया आयोजक के द्वारा निश्चित स्थान पर 'पाट' की स्थापना करता है। जिसमें बाबा रामदेव जी के पगलिये, घोड़े एवं कलश के अतिरिक्त पूजा करने की सामग्री-धूपेड़ा, शंख, झालर इत्यादि-रखे जाते हैं।

प्रमुख-गायक ऊपलों के द्वारा सद्य-निर्मित अग्नि (धूपिया) को धूपेड़े में रख कर पाट के आगे रख देता है। गायक-मंडली पश्चिमाभिमुख एवं श्रोता-गण पूर्वाभिमुख होकर बैठते हैं॥ पाटवी-गायक गो-घृत को उपर्युक्त धूपियों में होम कर 'जोत' (ज्योति) करता है। इस जोत का दर्शन करते ही सभी उपस्थित जन बाबा रामदेवजी की जय बोलते हैं। प्रमुख-गायक अपने साजों के साथ सम्मिलित स्वर में 'आरती' गाता है।

आरती गा लेने के उपरांत बाबा रामदेवजी की जीवन-लीला से संबंधित पांच भजन (पाट के भजन) प्रमुख गायक द्वारा सम्मिलित स्वर में प्रस्तुत किये जाते हैं। तत्पश्चात् श्रोताओं की अभिरुचि जानकर किसी भी लोक-गाथा के गाने का निर्णय लिया जाता है।

### साज

बाबा रामदेवजी के कामड़ियों द्वारा उपयोग में लाया जाने वाला प्रमुख साज 'तन्दूरा' ही है और इसके साथ ताल देने के लिए 'मंजीरा' का उपयोग किया जाता है। ढोलक, हारमोनियम, किलानेट, इत्यादि वाद्यों का प्रयोग नये-जमाने की देन है।

### गायन

लोक गाथाओं के गायन की पद्धति अन्य सामान्य भजन-वाणियों से भिन्न है। लोक-गाथा का गायक (पाटवी-गायक) सर्वप्रथम अपनी मंडली के साथ सम्मिलित स्वर में लोक-गाथा की एक

कड़ी (पद्य) प्रस्तुत करता है। कड़ी की समाप्ति पर उस गाथा में प्रयुक्त टेक-पद की आवृत्ति भी सम्मिलित रूप में ही प्रस्तुत की जाती है। टेक-पद की समाप्ति पर 'हुंकारिया' (जो पूर्व निश्चित होता है) —भलो ऽऽऽ कह्यो ऽऽऽ—जोर से कहता है। इसके प्रत्युत्तर स्वरूप प्रमुख-गायक— "भलो नांव महाराज रो ! भला है गोगो अर गुसांई, तो सुणै सांभळै जिकां रो तो कहणो ही कांई" इत्यादि उत्साहवर्द्धक वाक्यों द्वारा हुंकारिया एवं श्रोताओं के उत्साह को बढ़ाता है। तत्पश्चात प्रस्तुत 'कड़ी' के पाठ को धीमी गति से श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत करता है। इसके बाद इस कड़ी के पूर्वापर से संबंधित कोई कथा हो तो उसका वर्णन करते हुए उस पूरी कड़ी का भावार्थ अपनी सरस एवं सरल भाषा में श्रोताओं के सम्मुख रखता है। इस प्रक्रिया को 'अरथावली' कहा जाता है। इस प्रकार जब तक 'गाथा' पूरी नहीं हो जाती, यह क्रम निरंतर चलता रहता है। काव्य एवं संगीत का समा बंधा हुआ चलता रहता है तथा श्रोताओं को प्रतीति तक नहीं होती कि इतनी लंबी रात्रि कैसे व्यतीत हो गई।"

## सिद्ध या सिध

सिद्धाचार्य जनसनाथ जी का जन्म वि. की 16वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में माना जाता है। इनके पिता का नाम हम्मीरजी तथा माता का नाम रूपांदे था। इनके अनुयायियों की मान्यता है कि— सिद्धाचार्य जसनाथजी को 'भागथळी' नामक स्थान पर गुरु गोरखनाथ ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर उद्‌बोधित किया था और उन्हीं की प्रेरणा से इन्होंने एक धार्मिक-पंथ स्थापित किया, जिसे वर्तमान में 'सिद्ध-मत' अथवा 'जसनाथी-पंथ' कहा जाता है। इस पंथ के छत्तीस धर्म नियम हैं। इन नियमों को पालन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति 'जसनाथी' कहलाता है। कतिपय जाट सिद्धाचार्य जसनाथजी के शिष्य बन गये थे, वे 'सिध' कहलाने लगे। वर्तमान में 'सिध' एक जाति के रूप में विख्यात है। बीकानेर-क्षेत्र में इनके कई गांव बसे हुए हैं। 'सिध' अपने सिर पर भगवें रंग की पगड़ी अथवा साफा बांधते हैं तथा गले में एक काले रंग का धागा पहनते हैं। इनके एक मात्र इष्ट सिद्धाचार्य जसनाथजी ही हैं। जसनाथ जी के अन्य अनुयायी सिधों को गुरु रूप में मानते हैं। सिद्धाचार्य जसनाथजी के नाम पर होने वाले रात्रि-जागरण में गायक, प्रधानतया सिध ही होते हैं। इनमें अग्नि-नृत्य का भी प्रचलन है। रात्रि जागरण के अवसर पर आमन्त्रित श्रोताओं की अभिरुचि देख कर अग्नि-नृत्य का आयोजन किया जाता है। दहकते हुए अंगारों पर खुले पैरों चलते हुए इन सिधों को देखकर जन-सामान्य में यह धारणा बद्धमूल हो गई है कि सिध नर्तक अग्नि-प्रवेश से पूर्व उसे अभिमंत्रित जल छिड़कर बांध देते हैं। परन्तु वास्तव में ऐसा कुछ नहीं है। अग्नि-नृत्य भी अन्य नृत्यों की तरह एक कला है और इस कला में पटु व्यक्ति ही अग्नि में प्रवेश करके भी नहीं जलता है। फिर भी अग्निनृत्य वास्तव में है आश्चर्यजनक।

## साज

सिध गायक अपने 'गायबे' में साज के रूप में नगाड़ों का उपयोग करते हैं। यद्यपि सिधों के नगाड़े भी अन्य नगाड़ों की तरह तांबे एवं लोहे के बने होते हैं और भैंस के चर्म (पाडेल) द्वारा मढ़े

हुए होते हैं, परन्तु वादन में ये गायक लकड़ी के डंडों (डंकों) का प्रयोग न करके अपने दोनों हाथों की हथेलियों से बजाते हैं। विभिन्न राग-रागनियों में नगाड़े की लय भी बदलती रहती है। नगाड़ों के साथ ताल के लिए मंजीरों का प्रयोग किया जाता है। ये कांसे के बने हुए होते हैं। सिध-गायक मंजीरों को भी विभिन्न आकर्षक मुद्राओं के साथ बजाने में प्रवीण हैं।

### रात्रि जागरण

सिद्धाचार्य जसनाथजी के अनुयायियों द्वारा 'बोलवा' करने पर अथवा सिद्धाचार्य से संबंधित पर्वों पर रात्रि-जागरण का आयोजन किया जाता है। जसानाथियों द्वारा आमंत्रित किये जाने पर सिध-गायक अपनी मंडली के साथ आमंत्रणदाता के यहां पहुंचते हैं। सायं-कालीन भोजन आमंत्रणकर्त्ता ही करवाता है। आमंत्रित श्रोताओं को सिद्धाचार्य जसनाथजी के प्रसाद स्वरूप 'शेष' दी जाती है। अनेक स्थानों पर गायकों के लिए विशेष चौकियां बनी हुई हैं। परन्तु जहां पर इस प्रकार का कोई साधन नहीं होता है, तब ये बिछायत पर बैठते हैं। श्रोतागण इनके सामने मुंह करके बैठते हैं। श्रोताओं एवं गायबियों के मध्य अग्नि-नृत्य के लिए स्थान छोड़ दिया जाता है।

### गायन (गायकी)

सिध-गायबी गायन के समय वृत्ताकार न बैठ कर एक पंक्ति बना कर बैठते हैं। सिद्धाचार्य जसनाथजी की आरती एवं उनके जीवन से संबंधित भजन गाने के पश्चात् श्रोताओं की अभिरुचि जानकर प्रलंब-गाथा प्रारंभ की जाती है। सिधों की राग-रागनियां, यद्यपि परंपरागत हैं, परन्तु साधारण श्रोताओं को 'हो..हो..' के अतिरिक्त कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता। शनैःशनैः अभ्यास हो जाने पर ही क्या गाया जा रहा है, इसका पता चल पाता है।

पांडवों से संबंधित कथाएँ (अखाड़े) गाने की एक विशेष विधि है। सर्व-प्रथम प्रमुख (पाटवी) अपने सभी सहयोगियों के साथ सम्मिलित स्वर में गाथा की कड़ी को प्रस्तुत करता है। विराम के समय हुंकारिया— "मीठा बोल्या"—'भलां कैयो'—इत्यादि शब्दों को प्लुत ध्वनि के साथ प्रस्तुत करके गायबियों का उत्साह वर्धन करता है। प्रमुख गायबी इसका प्रत्युत्तर देकर गायी हुई कड़ी को पुनः स्पष्ट रूप से श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत करता है। यदि कहीं पर पूर्वापर प्रसंग जोड़ने के लिए गेय-भाग में जानकारी नहीं हो तो पाटवी-गायक अपनी ओर से सरलभाषा में विशेष लय के साथ गद्य में उसे प्रस्तुत करता जाता है। इस प्रकार जब तक गाथा पूरी न हो जाय क्रम निरंतर चलता रहता है। बाबा रामदेवजी के अनुयायियों की तरह सिध-गायबी विस्तार के साथ 'अरथावणी' नहीं करते हैं।

♦♦♦